शिक्षा का अधिकार और शिक्षक की भूमिका

उषा शर्मा*

शिक्षा का अधिकार के संदर्भ में शिक्षकों की भूमिका में और अधिक इज़ाफा हुआ है। अब उसे बच्चों को उनकी उम्र के अनुसार न केवल शिक्षा के लिए प्रयासरत होना होगा बल्कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का 'वादा' भी निभाना होगा। शिक्षक की भूमिका ज्ञान प्रदान करने वाले के रूप में न होकर एक सुगमकर्ता के रूप में है जिसका अर्थ है – सीखने के लिए उचित वातावरण का निर्माण करना। एक सृजनशील शिक्षक के लिए यह ज़रूरी है कि वह ज्ञान को व्यक्तिगत अनुभव के रूप में समझे जो सीखने-सिखाने के साझे अनुभव के रूप में प्राप्त किया जाता है। साथ ही उसमें सामाजिक, पेशेवर और प्रशासनिक संदर्भों के प्रति संवेदनशीलता हो जिनमें उसे काम करना पड़ता है।

'शिक्षा का अधिकार' स्वयं एक उपलब्धि भी है और चुनौती भी। उपलब्धि इसलिए कि अब प्रत्येक बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण करने का अवसर एक अधिकार के रूप में मिलेगा। चुनौती इसलिए कि बच्चों को उनकी उम्र के अनुरूप शिक्षा देना और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर ज़ोर देना अनेक प्रकार की तैयारी और प्रशिक्षण की माँग करती है। हमारे देश में न जाने कितने ही ऐसे शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान हैं जो नियमित और दूरस्थ पाठ्यक्रम के माध्यम से शिक्षकों की तैयारी में 'जुटे' हैं – शिक्षा के अधिकार को पूरा करने के लिए! शिक्षा का अधिकार बनने और लागू हो जाने से पूर्व भी शिक्षा के प्रति गहन चिंतन विद्यमान था। फिर ऐसा क्या हुआ कि बच्चों की शिक्षा के सरोकारों पर अधिक चिंतन और प्रतिबद्धता की माँग की जाने लगी। 'शिक्षा' पहले भी थी और आज भी है। अनेक शिक्षा नीतियाँ इस बात की प्रमाण हैं कि बच्चों की शिक्षा के प्रति हमारी सोच कितनी सकारात्मक रही है। हाँ, अब इतना भर है कि बच्चों के इस अधिकार का हनन होने की स्थिति में कोई भी न्यायालय का दरवाज़ा खटका सकता है। अब

**एसोसिएट प्रोफ़ेसर, डी.ई.ई, एन.सी.ई.आर.टी, नयी दिल्ली*

अनेक व्यक्तियों, अधिकारियों की प्रतिबद्धता सुनिश्चित हो गई है। बच्चों की शिक्षा अब 'नैतिक प्रतिबद्धता' के दायरे से निकलकर 'संवैधानिक अथवा न्यायिक प्रतिबद्धता' में तब्दील हो गयी है। लेकिन ज़रा विचार करें कि क्या केवल 'अधिकार' के दायरे में आने पर ही स्थितियों को गंभीरता से देखा जाना चाहिए जबकि अनेक व्यक्तियों का ऐसा मानना है कि शिक्षण एक पवित्र पेशा है! समय की किसी भी धारा में शिक्षा का मुद्दा सदैव चिंतनीय है और इसे गंभीरता से लेने की आवश्यकता है।

शिक्षा के संदर्भ में श्री रवींद्रनाथ टैगोर का मानना है कि इंसान का काम जीवन के लिए अति आवश्यक चीज़ों को जुटा कर नहीं चल सकता। इंसान अपनी कल्पना के सहारे अति आवश्यक से आगे की सोचता है। इस सोचने के क्रम में उसे आनंद की प्राप्ति होती है। अगर किसी बच्चे को उसके शरीर के आकार के बराबर के घर में रहने को बाध्य किया जाए तो इससे उसके स्वास्थ्य तथा आनंद दोनों में बाधा पड़ेगी। इसी प्रकार शिक्षा को न्यूनतम कुशलताओं तथा जानकारियों तक सीमित करने से बच्चों के मन की वृद्धि नहीं होगी। आवश्यक शिक्षा के साथ स्वाधीन पाठ को मिलाना होगा, अन्यथा बच्चे की चेतना का विकास नहीं होगा–आयु बढ़ने पर भी बुद्धि की दृष्टि से वह सदा बालक ही रहेगा (रवींद्रनाथ के निबंध.269)। इससे आगे वे कहते हैं कि शिक्षा के नाम पर हम बच्चों के सामने तात्कालिक उद्देश्यों के अलावा कुछ नहीं रखते। इन उद्देश्यों को प्राप्त करवाने के लिए बच्चों को दौड़ाया जाता है। इसलिए बचपन से ही हाँफते–हाँफते, दाएँ–बाएँ न देखकर, जल्दी–जल्दी सबक याद करने के अलावा और कुछ करने का हमारे पास समय नहीं होता। बच्चों के हाथ में यदि कोई मनोरंजन की पुस्तक दिखाई पड़ी तो वह फ़ौरन छीन ली जाती है। 'शिक्षा में हेर–फेर' नामक अपने लेख के अनुसार रवींद्रनाथ टैगोर के लिए शिक्षा का अर्थ परिचय पाल लेना या याद कर लेना नहीं है। वे जानकारियों के ढेर को शिक्षा नहीं मानते। उनके लिए शिक्षा का अर्थ है चिंतन और कल्पना का विकास। जब सीखने वाला सीखी हुई बातों का संबंध अपने भाव जगत के साथ बैठा लेता है और स्वतंत्र रूप से नए–नए भाव जगतों की कल्पना करने लगता है तब उसे शिक्षित माना जाना चाहिए। (वही)

अत: आवश्यक है कि बच्चों की शिक्षा और उसके उद्देश्यों को स्पष्टतापूर्वक समझें और सीखने–सिखाने की प्रक्रियाओं को सुनिश्चित करें।

जैसा कि हम जानते हैं कि कक्षा में प्रत्येक बच्चे के लिए सीखने की परिस्थितियाँ न तो समान होती हैं और न ही सदैव अनुकूल। कहने का तात्पर्य यह है कि कक्षा का प्रत्येक बच्चा अपने समस्त 'संस्कारों' के साथ स्कूल में प्रवेश करता है। सभी की अपनी विशिष्ट पारिवारिक पृष्ठभूमि होती है जो उसके सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। यदि बच्चों को शिक्षक की अभिप्रेरणा के रूप में ठोस संबल न मिले तो संभव है कि वे परिस्थितियों की जटिलताओं के सामने टिक न पाएँ। इतना ही नहीं शिक्षक की अभिप्रेरणा बच्चे को अपना विश्लेषण करने,

अपने लिए स्वयं दिशा निर्धारित करने में भी सहायता करती है। आज शिक्षक की भूमिका एक सुगमकर्ता के रूप में होती है जो बच्चों के सीखने हेतु उपयुक्त वातावरण का निर्माण करता है। बच्चों की विविध अधिगम शैलियों (learning style) की आवश्यकताओं को संतुष्ट करना भी शिक्षक का ही कार्य है। शिक्षक के समय उसके द्वारा नियोजित किए जाने वाले कक्षायी अभ्यासों के तथ्य पूर्णत: स्पष्ट होने चाहिए। उनके स्वयं के भीतर उत्साह, उमंग और लचीलापन होना चाहिए ताकि वे परिस्थितियों, आवश्यकताओं के अनुरूप कक्षा की अभ्यासों को नया रूप-अवसर प्रदान कर सकें।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 में यह स्पष्टत: कहा गया है कि शिक्षक की शिक्षा को स्कूली व्यवस्था की उभरती माँगों के प्रति अधिक संवेदशील होना चाहिए। उसे शिक्षकों को इसके लिए तैयार करना चाहिए कि वे निम्नलिखित रूप में अपनी भूमिका निभाएँ –

- उनको उत्साहवर्धक, सहयोगी और मानवीय होना चाहिए जिससे विद्यार्थी अपनी संभावनाओं का पूर्ण विकास कर ज़िम्मेदार नागरिक के रूप में अपनी भूमिका निभाएँ।
- ऐसे व्यक्तियों के समूह का सक्रिय सदस्य बनें, जो लगातार सामाजिक और विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर सजगता से पाठ्यचर्या सुधार में रत हों।
- इस दृष्टि को साकार करने के लिए, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि शिक्षक-प्रशिक्षण में ऐसे तत्त्व समाहित हों जो विद्यार्थी-शिक्षक को निम्न दिशाओं में सक्षम बनाएँ –

– सीखना किस प्रकार होता है, इसकी समझ उसमें हो और वह उसके अनुकूल माहौल बनाए।

– ज्ञान को व्यक्तिगत अनुभव के रूप में समझें जो सीखने-सिखाने के साझे अनुभव के रूप में प्राप्त किया जाता है, न कि पाठ्यपुस्तकों के बाह्य यथार्थ के रूप में।

– उन सामाजिक, पेशेवर और प्रशासनिक संदर्भों के प्रति उसमें संवेदनशीलता हो जिनमें उसे काम करना पड़ता है।

– इस प्रकार की उपयुक्त क्षमताओं का विकास वह कर सके जिससे वास्तविक स्थितियों में उसकी न केवल उपरोक्त समझ हो, बल्कि वह उनकी रचना भी कर सके।

– भाषा की गहरी समझ और दक्षता हासिल करे।

– अपनी आकांक्षाओं, स्व-समझ, क्षमताओं और रुझानों को पहचाने।

– वह शिक्षक के रूप में पेशेवर उन्मुखीकरण का प्रयास करे।

– मूल्यांकन को सतत् शैक्षिक-प्रक्रिया माने।

– कला शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में कला और सौंदर्यबोध समझ का विकास कर सके।

– वंचित बच्चों और विभिन्न असमर्थताओं वाले बच्चों की आवश्यकताओं सहित

सभी बच्चों की सीखने की आवश्यकताओं को समझ सके।

- – दृष्टिकोण में बदलाव के संदर्भ में यह आवश्यक है कि शिक्षकों में व्यावसायिकता के विकास के लिए शिक्षक–प्रशिक्षण के एक अंतर्भूत मॉडल के विकास को बढ़ावा दिया जाए।
- – परामर्श के कौशल और क्षमताओं का विकास कर सके ताकि बच्चों के शैक्षणिक, व्यक्तिगत और सामाजिक स्थितियों का समाधान सुझाने में उसे सुविधा हो।
- – कार्य के द्वारा विभिन्न विषयों का ज्ञान विविध मूल्यों और विविध कौशलों के विकास के साथ किस प्रकार प्राप्त होता है इसकी शिक्षा देना सीखे।

वर्तमान समय में शिक्षक की भूमिका में एक बड़ी तब्दीली आई है। उसे अब तक ज्ञान के स्रोत के रूप में केंद्रीय स्थान मिलता रहा है, वह सीखने-सिखाने की समूची प्रक्रिया का संरक्षक और प्रबंधक रहा है और पाठ्यचर्या या अन्य विभागीय आदेशों के ज़रिए सुपुर्द शैक्षणिक और प्रशासनिक ज़िम्मेदारियों को पूरा करने वाला रहा है। अब उसकी भूमिका ज्ञान के स्रोत के बदले एक सहायक की होगी जो सूचना को ज्ञान/बोध में बदलने की प्रक्रिया में विविध उपायों से शिक्षार्थियों को उनके शैक्षणिक लक्ष्यों की पूर्ति में मदद करे। (रा.पा.रू.2005,141,142)

स्पष्ट है कि शिक्षक की भूमिका एक सहयोगकर्ता, सुगमकर्ता की है जो शिक्षार्थियों के सीखने के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण कर सके। आइए, इसे एक उदाहरण से समझते हैं –

सुरेखा चाहती थी कि उसकी कक्षा के बच्चे आज कक्षा में नहीं बल्कि बाहर खुले मैदान में पढ़ें। वह बच्चों को पेड़-पौधों की विशेषताओं, उनके विभिन्न भागों, कार्यों के बारे में बताना चाहती थी। यहाँ 'बताना' शब्द से तात्पर्य सुरेखा के शिक्षण-लक्ष्य से है जिसमें बच्चों की सक्रिय सहभागिता निःसंदेह सुनिश्चित है। सब प्रबंध करने के बाद वह अभी सब बच्चों को बाहर मैदान में ला ही पाई थी कि बारिश शुरू हो गई। सुरेखा की जगह कोई और शिक्षिका होती तो संभवतः तुरंत उदास, निराश हो जाती। लेकिन सुरेखा में इतना लचीलापन और संसाधनशीलता है कि उसने तुरंत सब बच्चों को कक्षा के अंदर व्यवस्थित किया और बोर्ड पर बड़ा सा दृश्य बनाया। उस दृश्य में वही सब कुछ था जो बाहर था – पेड़-पौधे, बारिश, घास, फूल, मेंढक और भी बहुत कुछ। फिर सुरेखा ने बोर्ड पर बने दृश्य को देखने, निहारने और सूक्ष्म विस्तार का अवलोकन करने के लिए बच्चों को पर्याप्त समय दिया। इसके बाद सुरेखा ने दो कार्य किए, दृश्य पर आधारित –

- रोचक कहानी सुनाई
- प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता करवाई

सुरेखा की कहानी में पेड़-पौधे, उनके भाग उनके कार्य का मज़ेदार वर्णन था, जैसे –

- बारिश की बूँद फूल पर गिरी तो किसी फूल का कान मुड़ गया तो किसी की नाक पर लग गई।

- जड़ें मज़े से बारिश का रस पीती रहीं और पौधे को थामे रहीं।
- पत्तियाँ कई दिनों से नहाई नहीं थीं, इसलिए उनकी माँ ने बादल से पानी का फव्वारा चलाने को कहा और सब नहा लिए।
- मेंढक भी पौधे के नीचे जा बैठा कि शायद अब चाय और पकौड़े मिल जाएँ।

इस तरह कहानी कहते-कहते सुरेखा ने कक्षा में समाँ बाँध दिया और बच्चों के लिए आज के लिए तय उद्देश्य की प्राप्ति भी हो गई। (वैसे यह उद्देश्य आज पूरा न भी हुआ होता तो कोई बात नहीं थी)। प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता इससे भी मज़ेदार थी। सुरेखा ने बच्चों से कहा कि आज आप प्रश्न पूछिए, मैं जवाब देने की कोशिश करूँगी। 'जवाब देने की कोशिश करूँगी' में विनम्रता का भाव था और बच्चों की योग्यता में विश्वास की झलक। बच्चों ने ढेर सारे प्रश्न पूछे। प्रश्न पूछना भी एक मानसिक कवायद है। प्रश्न पूछने के लिए विषय की स्पष्ट समझ होना ज़रूरी है। धीरे-धीरे बच्चों का प्रश्न बैंक समाप्त हो गया। सुरेखा जवाब देते समय बीच-बीच में विचार करने, सोचने का अभिनय भी करती जा रही थी - इससे बच्चों को और भी मज़ा आया।

सुगमकर्ता के रूप में एक शिक्षक की यही भूमिका होती है कि वह सीखने का अभिप्रेरक वातावरण का निर्माण करे, लचीलेपन की गुंजाइश के साथ कक्षायी अभ्यासों को आवश्यकतानुसार परिवर्तित कर सके। प्रस्तुत उदाहरण में सुरेखा की सृजनशीलता और कल्पनाशीलता तो स्पष्ट ही है साथ ही उनकी संसाधनशीलता भी उजागर हो जाती है कि वह बोर्ड और कला की गतिविधियों को आधार बनाकर अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफलता प्राप्त करती है। वह एक प्रभावशाली शिक्षिका सिद्ध होती है।

शिक्षक प्रभावशीलता (teacher effectiveness) के संदर्भ में हुए अनेक शोध इसी ओर संकेत करते हैं कि बच्चों की सफलता का अनुमान किसी अन्य की अपेक्षा इस बात से लगाया जा सकता है कि शिक्षक कक्षा में क्या करता है और बच्चे प्रभावी शिक्षक से निरंतर लाभ उठाते हैं (जार्डन, 2006)। शोध यह भी दर्शाते हैं कि अप्रभावी अथवा कम प्रभावी शिक्षकों की तुलना में प्रभावी शिक्षकों के माध्यम से बच्चे लगभग तिगुना लाभ उठाते हैं (सेंडर्स एवं रिवर्स, 1996)।

शिक्षक प्रभावशीलता का प्रभाव

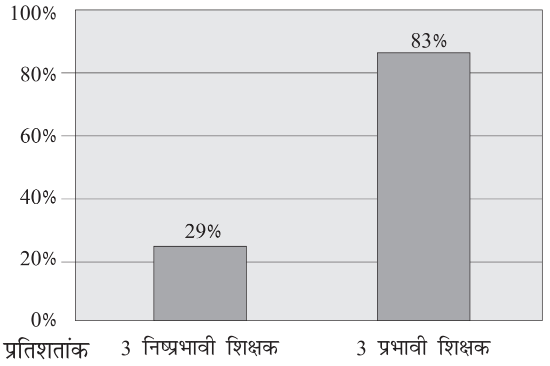

स्रोत: सेंडर्स एवं रिवर्स, 1996

यह एक सर्वस्वीकृत बात है कि कक्षाओं का स्वरूप विषमरूपी (hetrogenous) है जहाँ बच्चों की समाज-आर्थिक स्थिति में भी अंतर है और उनकी भाषिक पृष्ठभूमि में भी। इतना ही नहीं एक ही कक्षा के बच्चों के स्वयं के दृष्टिकोण, क्षमताओं, सीमाओं में भी अंतर है। अनेक बार शिक्षक निम्न समाज-आर्थिक स्थिति वाले बच्चों की क्षमताओं, योग्यताओं और सीखने की संभावनाओं को एक सिरे से नकार देते हैं। वे अकसर कहते सुने जा सकते हैं कि –

- 'इन्हें तो कुछ आता ही नहीं।'
- 'ये नहीं सीख सकते।'
- 'इन्हें सिखाना समय की बर्बादी है।'
- 'ये बस ढाबे पर ही काम करने के लायक हैं।'
- 'पढ़ना-लिखना इनके बस की बात नहीं है।'

और भी न जाने क्या क्या!

लेकिन शिक्षकों की यह सोच अनुचित है। प्रतिकूल पारिवारिक एवं सामाजिक परिस्थितियों में भी बच्चे बेहतर शैक्षणिक प्रदर्शन कर सकते हैं बशर्ते उन्हें स्कूल में समृद्ध और अभिप्रेरक वातावरण मिले। यदि शिक्षक अपने शिक्षण-कार्य को ईमानदारी और सृजनशील ढंग से संपन्न करता है तो बच्चे शैक्षिक परिदृश्य में भी सफलता प्राप्त कर सकते हैं। अनेक शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययनों के माध्यम से यह प्रमाणित किया कि सीखने संबंधी बच्चों की योग्यताओं पर प्रभावी शिक्षकों का इतना सार्थक प्रभाव पड़ता है कि निम्न आय स्तर और सफलता-रिक्तियों (achievement gaps) जैसी चुनौतियों की क्षतिपूर्ति हो जाती है (रिवकिन 2002, क्लोटफेल्टर 2007)। बच्चों की उपलब्धि को संवर्धित करने की चिंता करने वाले नीति-निर्माताओं, शिक्षकों और शिक्षा अधिकारियों को इन शोधों के निष्कर्षों पर ध्यान देना चाहिए ताकि शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी उचित संशोधन किया जा सके। यह भी स्वीकार करना होगा कि शिक्षक – गुणवत्ता के संकेतकों में प्रभावशीलता (शिक्षण) किसी भी अन्य संकेतक की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है।

शिक्षक की शैक्षिक योग्यताएँ गुणवत्ता को नियंत्रित करने और कभी-कभी बच्चों की उपलब्धि का अनुमान लगाने में सहायता करती हैं। इस संदर्भ में क्लोट फेल्टर (2007), गोल्डहैबर एवं ब्रूअर (2000), गोल्डहैबर (2006), केन एवं स्टेजर (2005), हनुशेक (2005), जेरसन एवं रिवकिन (2002) ने अपने शोध अध्ययनों के आधार पर यह विचार रखा कि शिक्षकों की योग्यताएँ प्रभावशीलता का अनुमान भर दे सकती हैं, वे बच्चों के सीखने के मापन का प्रत्यक्ष माध्यम नहीं हैं। अन्य शब्दों में, यदि हमें बच्चों के सीखने के बारे में जानना हो तो शिक्षकों की योग्यताएँ ठोस, निश्चित प्रभाव भी नहीं है। उच्च शैक्षिक योग्यता का परिणाम अनिवार्यतः बच्चों को उच्च शैक्षणिक उपलब्धि हो यह निश्चित नहीं है।

एक सुगमकर्ता (Facilitator) के रूप में शिक्षकों को यह समझाना होगा कि सीखने की प्रक्रिया में बच्चों की सक्रिय भागीदारी प्रमुख है

और बेहतर शिक्षा-शास्त्र का प्रमुख हिस्सा है (नेशनल रिसर्च काउंसिल, 2004)। अत: शिक्षकों को निरंतर यह प्रयास करना होगा कि बच्चे कक्षायी गतिविधियों में सक्रिय रूप से हिस्सा लें, न कि गतिविधियों के मूक दर्शक या श्रोता बनकर निष्क्रिय रहें। साथ ही बच्चों को अभिप्रेरित करने की योग्यता प्रभावी शिक्षकों की आधारभूत कुशलता है (कोनले, 2007)। शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इस ओर ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि शिक्षकों में यह कुशलता का विकास हो सके। शिक्षक की प्रभावशीलता में संवर्धन उनके व्यावसायिक विकास के माध्यम से संभव है। शोध बताते हैं कि एक-दिवसीय कार्यशालाएँ शिक्षण में सुधार लाने के लिए पर्याप्त नहीं हैं (गैरेट, 2001)। लेकिन स्टॉफ का विकास जो उसी भवन में निरंतर होता रहे जिसमें शिक्षक पढ़ाते हैं – प्रभावी होता है। यह तभी संभव है जब हमारे सामने स्पष्ट लक्ष्य हो, उपयोगी आँकड़े हों और शिक्षक-निवेश (Teacher input) हो (सुपोविट्ज एवं क्रिस्ट मैन, 2003; एजुकेशन ट्रस्ट, 2005, गैरेट, 2001)। जब शिक्षक अधिगम समुदायों (learning communities) का हिस्सा बनते हैं, जहाँ शिक्षक बच्चों की उपलब्धि में सुधार करने और सीखने के प्रति साझी ज़िम्मेदारी की संस्कृति का निर्माण करने के लिए मिलकर कार्य करते हैं तो उच्च स्कूली स्तर के शिक्षकों की प्रभावशीलता में सुधार होता है (हर्श एवं किलियन, 2007)। अत: स्कूलों में यह प्रयास हो कि शिक्षक परस्पर चर्चा करें, तर्क करें और अपने-अपने अनुभवों को एक दूसरे के साथ साझा करें।

शिक्षकों का यह दायित्व बनता है कि वे बच्चों को विषयगत ज्ञान के साथ-साथ अपने परिवेश के प्रति जागरूक बनाएँ और संवेदनशील भी। इस संदर्भ में श्री जे. कृष्णमूर्ति विद्यार्थियों से चर्चा करते हुए कहते हैं 'आपको गणित का अथवा इंजीनियरिंग का बहुत अच्छा ज्ञान हो सकता है। आप कोई डिग्री ले सकते हैं, किसी कॉलेज में प्रवेश कर सकते हैं और आप एक प्रथम श्रेणी के इंजीनियर बन सकते हैं। परंतु उसके साथ-साथ क्या आप संवेदनशील, सतर्क भी हो रहे हैं? क्या आप वस्तुनिष्ठ रूप से, स्पष्टता से, बुद्धि के साथ, बोध के साथ चिंतन भी कर रहे हैं? क्या ज्ञान और बुद्धि में कोई सामंजस्य है, उन दोनों में कोई संतुलन है? यदि आप पूर्वाग्रह से पीड़ित हैं, यदि आपके निश्चित मत हैं तो आपके चिंतन में स्पष्टता नहीं हो सकती। आप स्पष्टता से नहीं सोच सकते, यदि आप संवेदनशील नहीं हैं – संवेदनशील उसी के प्रति नहीं जो आपके बाहर हो रहा है वरन् उसके प्रति भी जो आपके अंदर हो रहा है। ......यदि आपके पास बुद्धि नहीं है, संवेदनशीलता नहीं है तो ज्ञान बड़ा ही खतरनाक हो सकता है। उसका विनाशकारी प्रयोजनों के लिए उपयोग हो सकता है। ....क्या आपके पास बुद्धि है जो प्रश्न करती है, जो अन्वेषण की चेष्टा करती है?....यदि नहीं तो आपके शिक्षित होने का अर्थ ही क्या है?'

श्री जे. कृष्णमूर्ति शिक्षा को प्रश्न करने, संवेदनशील और जागरूक होने से जोड़कर देखते हैं। इस प्रकार एक सुगमकर्ता के रूप में शिक्षक का यह दायित्व बनता है कि वह अपने बच्चों में

इन गुणों का विकास करने का प्रयास करे। यह वही शिक्षक कर सकता है जिसमें स्वयं में ये गुण मौजूद हैं। सीखने का अर्थ और सीखने की दुनिया अत्यंत विस्तृत है, अत: शिक्षक बच्चों को सब कुछ सिखाने की बजाय यह सिखाए कि सीखा कैसे जाता है। यदि बच्चे इस कौशल में दक्ष हो गए तो वे स्वयं ही अपनी दुनिया की खोज कर लेंगे और उसका विस्तार भी।

संदर्भ

1. एन.सी.ई.आर.टी., *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005.* नयी दिल्ली
2. नरवणे, विश्वनाथ (अनुवादक). 1990. *रवींद्रनाथ के निबंध- शिक्षा में हेर-फेर,* साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली
3. Porter, C. Andrew and Brophy, Jere. *Synthesis of research on good teaching – Insight from the work of the institute for research on teaching.* Educatonal Leadership, May,1988